ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI TITLED No. :UPBIL04292,
RNI REG. No.: UPBIL/2014/66218, SOCI.REG. No.: 561/2013-14 Vol.-5, No.-II, PP-175-180, YEAR- DEC.2016

चाणक्य नीति में वर्णित जीवन मूल्यों की प्रासंगिकता

❑ डॉ0 पंकज शर्मा

वर्तमान भारतीय समाज मूल्यों के विघटन एवं नैतिकता के अवमूल्यन के दौर से गुजर रहा है। प्राचीन आदर्श, मूल्य, अवधारणाओं को लगभग विस्मृत सा कर दिया गया है, अथवा परिवर्तित रूप में परिभाषित करके देखा जा रहा है। पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण एवं व्यक्तिवाद के प्रवाह में हमारा सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, एवं सांस्कृतिक परिवेश प्रदूषित हो चुका है। वैश्वीकरण एवं उपभोक्तावाद में हमने अपने राष्ट्रचिंतन, समाज चिन्तन एवं वैचारिक विरासत को वर्तमान से जोड़ने का कभी प्रयास नहीं किया। प्राचीन ऋषियों, मुनियों, चिन्तकों, एवं मनीषियों के विचार हमारे अतीत की अमूल्य वैचारिक धरोहर हैं। प्राचीन काल में राजनीति एवं व्यवहारिक सामाजिकता के प्रकाण्ड विद्वान चाणक्य ऐसी ही एक महान विभूति रहे हैं, जिन्होंने अपनी अमूल्य वैचारिक धरोहरों को अनेक ग्रन्थों में समेटकर हमारे पथप्रदर्शन हेतु अर्पित किया। वस्तुतः उनके वैचारिक चिन्तन की अवधारणायें तत्कालीन न होकर सर्वकालिक एवं सर्वदेशीय हैं।

आज के भौतिकवादी युग में हमने भले ही कितनी ही उन्नति कर ली हो, तथापि प्रत्येक छोटा–बड़ा, सफल–असफल, व्यक्ति किसी न किसी मानसिक तनाव, अवसाद, विषाद, दुखः, कलह–क्लेश, मानसिक द्वन्द्व आदि अनेक समस्याओं से स्वंय को घिरा हुआ पाता है तथा सुखाय प्रवृत्ति के चलते दुखः की निवृति एवं सुख प्राप्ति हेतु मृगतृष्णा की भाँति इधर –उधर भटकता रहता है। वस्तुतः कोई भी परिस्थिति दुखदायक एवं सुखदायक नहीं होती वरन् उसके प्रति हमारे मनोभाव एवं दृष्टिकोण ही उसे सुखदायक अथवा कष्टदायक बनाते हैं। इस लौकिक संसार में मनुष्य अज्ञानतावश मानवीय गुणों की प्रवृत्ति के फलस्वरूप किंकर्तव्यविमूढ़ स्थिति में स्वंय को पाता है, अतः ऐसी स्थिति से बचने, विपरीत परिस्थितियों से समायोजन करने, जीवन को सुखमय बनाने तथा मानवीय स्वरूप को समझने में आचार्य चाणक्य की पुस्तक " चाणक्यनीति" का अध्ययन आज भी प्रासंगिक है।

चाणक्य कौन थे? वस्तुतः वे एक ऐसे चतुर अद्भुत राजनीतिज्ञ थे, जिन्होंने मगध राज्य के नन्द वंश का समूल विनाश कर उसके स्थान पर चन्द्रगुप्त मौर्य के नेतृत्व में मौर्य साम्राज्य की प्रस्थापना कर राजनीतिक इतिहास में, तथा वहीं दूसरी ओर "कौटिल्यी अर्थशास्त्र" जैसे राजनीतिविषयक अपूर्व ग्रन्थ की रचना कर संस्कृत साहित्य में भी अपना नाम अमर कर लिया। अनेक नामान्तर होने पर भी इनका पितृप्रदत्त नाम 'विष्णुगुप्त' था, चणक नामक आचार्य के नाम पर "चाणक्य"(तीक्ष्ण एवं कुशाग्र बुद्विवाला) पैतृक नाम कहलाया एंवं गौत्र नाम से वह "कौटिल्य" (कुटिलनीति के निर्माता) कहलाये। 1 इनकी शिक्षा–दीक्षा तक्षशिला में हुई। जिस समय यूरोप में अरस्तू अपने ज्ञान एवं कौशल का राजनीति में प्रदर्शन कर रहा था, लगभग उसी समय भारत में चाणक्य भी अपने कौटिल्यी अर्थशास्त्र रूपी राज्य प्रबन्धन कौशल एवं वैचारिक दर्शन की आभा चहुँओर बिखेर रहे थे। उन्होनें अर्थशास्त्र के अलावा चाणक्यनीतिशास्त्रम, चाणक्यसारसंगह्र, लघुचाणक्य, एवं चाणक्यराजनीतिशास्त्रम जैसे अन्य ग्रन्थों की रचना भी की। प्रत्येक समाज और देश में अपने स्थापित जीवन मूल्य होते हैं, जो उस समाज एवं देश के साहित्य में दृष्टिगोचर होते हैं। साहित्य में ही उस देश की संस्कृति, सभ्यता, एवं प्राण अन्तर्निहित होते हैं। 'चाणक्यनीति' मानव जीवन मूल्यों पर आधारित एक ऐसा ही लौकिक ग्रन्थ है, जिसमें मानव जीवन के प्रत्येक जीवन दर्शन पर व्यवहारिक मार्गदर्शन किया गया है। दुर्भाग्य है कि चाणक्यनीति का नाम सुनते ही लोगों के मध्य यह

❑ एसि0 प्रो0– इतिहास विभाग, नेहरू पी.जी. कॉलेज, ललितपुर (उ0प्र0), भारत

धारणा होती है कि इस ग्रन्थ में चतुर, कुटिल और स्वार्थपरक राजनीतिक चालों के बारे में ही वर्णन होगा जो सर्वथा गलत धारणा है। जबकि चाणक्यनीति के मूल में स्वार्थ नही वरन् परमार्थ है। यही कारण है कि चाणक्य अपने इस ग्रन्थ के पहले ही श्लोक में तीनों लोकों के नाथ ईष्वर को प्रणाम कर इस ग्रन्थ का मंगलाचरण करते हैं–

पणम्य शिरसा विष्णुं त्रैलोक्याधिपतिं प्रभुम्,।
नानाशास्त्रोद्धृतं वक्ष्ये राजनीतिसमुच्चयम्।।[2]

वस्तुतः उन्होंने तो लोककल्याण की भावना से प्रेरित होकर ही कई मनीषियों के मानवजीवन मूल्यों के व्यवहारिक ज्ञान का समुच्चय कर लोगों तक पहुंचाने का गरूतर कार्य किया । उनके नीतिशास्त्र का उद्देश्य अच्छे और बुरे कर्म में भेद का ज्ञान कराना है। यह ग्रन्थ वस्तुतः व्यक्ति को जीवन को दुःखी बनाने वाले तत्वो की पहचान करा कर उनसे दूर रहने की सलाह द्वारा उसके जीवन को सुखी बनाने की व्यवहारिक बातें करता हैं।

भारत की राजनीति त्याग, तपस्या, बलिदान एवं लोककल्याण की भावना की पर्याय रही है, किन्तु वर्तमान युग में हमारे अधिकांश राजनीतिज्ञ धूर्तता, स्वार्थपरता, स्वपोषण एवं भ्रष्टाचार में आकण्ठ डूबे हुये है, जिससे जीवन मूल्य छिछले और आधारहीन हो गये हैं। राजतंत्रात्मक शासन व्यवस्था के अर्न्तगत भी चाणक्य ने राजा को सर्वाधिकार देते हुये भी दायित्वों, नियमों एवं अनुशासित रहते हुये यर्थाथवादी दृष्टिकोण रख प्रजा की सुख सुविधाओं और लोककल्याणार्थ कार्य करने में ही राज्य एवं प्रजा दोनों की भलाई का संदेश दिया है–

प्रजासुखे सुखं राज्ञः प्रजानां च हिते हितम्,।

मानव को धूर्त और चापलूसों से सावधान रहने एवं उनकी पहचान के बारे में बताते हुये चाणक्य लिखते हैं– मुखं पद्यमदलाकारं वाचा चन्दनशीतला। ह्रदयं क्रोधसंयुक्तं त्रिविधि धूर्तलक्षणम्।।[3]

किसी भी देश की आर्थिक समृद्वि, सामाजिक चेतना, राजनैतिक एकता एवं विकास, प्रजातंन्त्र तथा जीवन स्तर की उच्चता को प्राप्त करने में शिक्षा का विशेष स्थान होता है। क्योंकि विद्या अध्ययन से ही मनुष्य अपने ज्ञान चक्षुओं को विकसित कर पूर्णता का अनुभव कर अपने जीवन को इस भवसागर में सफल बना सकता है। चाणक्य ऐसे माता–पिता को अपनी सन्तान का शत्रु तक बताते हैं, जो अपनी सन्तानों को विद्याज्ञान नहीं कराते। वे लिखते हैं–

माता शत्रुः पिता वैरी येन बालो न पाठितः। न शोभते सभामध्ये हंसमध्ये बको यथा ।।[4]

विद्या के अभाव में मनुष्य का जीवन व्यर्थ है, ऐसे मनुष्य की चाणक्य कुत्ते की पूंछ के समान तुलना करते हुये कहते हैं–

शुनः पुच्छमिव व्यर्थ जीवितं विद्यया विना। न गुहा गोपने शक्तं न च दंषनिवारणे ।।[5]

विद्या से युक्त व्यक्ति ही संसार में आदर और सम्मान पाता है–

विद्वान् प्रशस्यते लोके विद्वान गच्छति गौरवम्। विद्यया लभ्यते सर्व विद्या सर्वत्र पूज्यते।।[6]

इसके साथ ही वे वर्तमान में विद्याध्ययन में रत विद्यार्थियों के फैशन और भौतिक सुख–सुविधाओं को व्यसन की भाँति मानते हुये विद्याप्राप्ति में बाधक मानते थे। उनका कहना है–

सुखार्थी चेत् त्यजेद्विद्यां विद्यार्थी च त्यजेत् सुखम्। सुखार्थिनः कुतो विद्या कुतो विद्यार्थिनः सुखम्।।[7]

विद्यार्थियों को सलाह देते हुये वे लिखते हैं कि यदि उन्हें जीवन में सफल होकर समाज में आदर और सम्मान प्राप्त कर विद्वान बनना है तो उन्हें निम्नांकित आठ बातों को त्याग देना चाहिये–

कामं क्रोधं तथा लोभं स्वादं श्रृंगारकौतुके। अतिनिद्रातिसेवे च विद्यार्थी ह्रष्ट वर्जयेत् ।।[8]

वास्तविक ज्ञान के रसास्वादन में वह श्रेष्ठ गुरू की अनिवार्यता पर विशेष बल देते हुये वर्तमान की अनौपचारिक शिक्षा पद्वति को उपयुक्त नहीं स्वीकारते थे। उनका कहना है कि विद्या के वास्तविक रहस्य गुरूमुख से ही प्राप्त हो सकते हैं, जिन्हें विद्यार्थी अपनी सेवाभावी आराधना से ही गुरू को प्रसन्न कर प्राप्त कर सकता है–

पुस्तकप्रत्ययाधीतं नाधीतं गुरूसन्निधौ। सभामध्ये न शोभयन्ते जारगर्भा इव स्त्रियः।।[9]

यथा खात्वा खनित्रेण भूतले वारि विन्दति। तथा गुरूगतां विद्यां शुश्रूशुरधिगच्छति।।[10]

इसके अलावा वर्तमान जीवन में सांसारिक क्लेश की असली जड़ वाणी की स्वछंदता और चपलता पर अंकुश लगाने की सलाह देते हुये कहते है, कि परमात्मा ने मुख एक तथा कान दो दिये हैं अतः मनुष्य को चाहिये कि वह सुने अधिक और बोले कम।–

श्रुत्वा धर्म विजानाति श्रुत्वा त्वजति दुर्मतिम्। श्रुत्वा ज्ञानमवाप्नोति श्रुत्वा मोक्षमवाप्नुयात्।।[11]

आज के भौतिकवादी एकांकी जीवन में माता–पिता अपने बच्चों को समयाभाव के चलते अत्यधिक लाड़–प्यार में उन्हें पंगु बनाकर उनकी प्रत्येक उचित, अनुचित मांगों को पूरा करने हेतु प्रयत्नशील रहते हैं। फलस्वरूप अत्यधिक लाड़–प्यार में वे दिशाहीन होकर अपने जीवन को गलत मार्ग पर ले जाकर अपने जीवन को ही बर्बाद कर लेते हैं। चाणक्य ऐसे माता–पिता को लताड़ते हुये कहते हैं–

लालनाद् बहवो दोषास्ताडनाद् बहवो गुणाः। तस्तात्पुत्रं च शिष्यं च ताडसेन्न तु लालयेत्।।[12]

वस्तुतः लाड़–प्यार से बच्चों में अनेक दोष उत्पन्न हो जाते हैं और दण्ड देने से अनेक गुण उत्पन्न होते हैं। अतः पुत्र, पुत्रियों अथवा शिष्य, शिष्याओं को आवश्यकता से अधिक लाड़ देने से बचना चाहिये, तथा आवश्यक होने पर उन्हें ताड़ना भी चाहिये। इसी में उनका वास्तविक हित निहित है। कबीरदासजी ने भी कहा है कि –

गुरू कुम्हार, शिष्य कुम्भ है, गढ़–गढ़ काढ़े खोट। अन्दर हाथ सहार दे, बाहर मारे चोट।।

चाणक्य के अनुसार– लालयेत् पन्च वर्षाणि दश वर्षाणि ताडयेत्। प्राप्ते तु षोडशे वर्षे पुत्रं मित्रवदाचरेत्।[13]

पांच वर्ष तक पुत्र के साथ प्यार और दुलार करना चाहिये तत्पश्चात दस वर्ष तक ताड़ना करनी चाहिये और सोलहवां वर्ष आरम्भ होते ही पुत्र के साथ मित्रवत व्यवहार करना चाहिये।

चाणक्य व्यक्ति को सच्चे मित्र एवं बन्धुओं की पहचान में सतर्कता बरतने की सलाह देते हुये कहते हैं कि मनुष्य को आँख मूंद कर हर किसी पर भरोसा नहीं करना चाहिये वरना उसे सिवाय दुःख के कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकेगा। क्योंकि अधिंकांश मित्र एवं बन्धु–बांधव मात्र दिखावे के लिये साथ होने का ढ़ोग करते हैं। उनके अनुसार–

आतुरे व्यसने प्राप्ते दुर्भिक्षे शत्रु–संकटे। राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति स बान्धवः।।[14]

परोक्षे कार्यहन्तारं प्रत्यक्षे प्रियवादिनम्। वर्जयेत्तादृशं मित्रं विषकुम्भं पयोमुखम्।।[15]

अतः रोगी होने पर, दुःखी होने पर, अकाल पड़ने पर, शत्रु से संकट उत्पन्न होने पर, किसी मुकदमें में फँस जाने पर गवाह एवं सहायक के रूप में राजसभा में और मरने पर जो श्मशान में भी साथ देता है, वही सच्चा बन्धु अथवा मित्र है।

प्रायः चाणक्य पर स्त्रियों के सम्बन्ध में उन्हे कमतर आंकने का आक्षेप किया जाता है। वस्तुतः स्त्रियां तो किसी भी देश या समाज की आधी आबादी के रूप में महत्वपूर्ण अंग होतीं हैं। फिर भला समाज के व्यवहारिक जीवन को अपनी बौद्विक चातुर्यता से गम्भीररूप में समझने वाले चाणक्य से उनके अनादर अथवा उपेक्षा की अपेक्षा कैसे की जा सकती है? वस्तुतः उन्होनें तो स्त्रियों के साहस एवं बुद्वि को पुरूषों की अपेक्षा कई गुना बताते हुये कहा कि–

स्त्रीणां द्विगुण आहारो बुद्विस्तासां चतुर्गुणां। साहसं षड्गुणं चैव कामोष्टगुण उच्यते।।[16]

पत्नीं के गुणों की व्याख्या करते हुये चाणक्य कहते हैं– सा भार्या या शुचिर्दक्षा सा भार्या या पतिव्रता। सा भार्या या पतिप्रीता सा भार्या सत्यवादिनी।।[17]

अर्ध भार्या मनुष्यस्य भर्या श्रेष्ठतमः सखा। भार्या मूलं त्रिवर्गस्य भार्या मूलं तरष्यितः।।

इस प्रकार पत्नी पुरूष का आधा अंग है, वही सर्वश्रेष्ठ मित्र है, धर्म, अर्थ, काम, का मूल है तथा भवसागर से पार उतरने की इच्छा वाले पुरूष के लिये वही प्रमुख साधन है।

वस्तुतः नारी गुणों से ही गौरव पाती है। वे नारी को संसार में गौरव प्राप्ति हेतु पाँच पकारों से युक्त होने की बात करते हुये कहते है–

पुत्रसूः पाककुशला पवित्रा च पतिव्रता। पदाक्षी पन्चपैर्नारी भुवि संयाति गौरवम्।।[18]

आज नारी अपनी षक्ति को पहचानकर पुरूषों के समान जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता के नवीन

आयाम स्थापित कर रही है, चाहे वह राजनीति हो, प्रशासन हो, कम्पनियों का प्रबंधन हो, फौज हो, फाइटर पायलट हों अथवा खेल का मैदान हो। अभी हाल ही में ओलम्पिक खेलों में महिलाओं ने ही अपने साहस का दमखम प्रदर्शित कर राष्ट्र का गौरव बढाया।

आज जहां छल, कपट, धूर्तता, झूठ, व्यभिचार आदि दुर्गणों से समाज आच्छादित है। आज समाज में व्याप्त व्यभिचार अथवा बलात्कार की घटनाओं के सम्बन्ध में वे लिखते हैं कि जिस प्रकार से उल्लू को दिन में, कौवे को रात में नहीं दिखाई देता है। उसी प्रकार कामान्ध व्यक्ति को दिन या रात कहीं कुछ भी नहीं दिखाई देता है। चाणक्य अपने अभीष्ट लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु सिंह की भाँति एकाग्रचित्त भाव से मानव को सचेत करते हुये कहते हैं कि–

मनसा चिन्ततं कार्य वाचा नैव प्रकाषयेत्। मन्त्रेण रक्षयेद् गूढ़ं कार्ये चापि नियोजयेत्।। [19क]

अर्थात मनुष्य को मन के द्वारा विचारे गये अभीष्ट कार्य को वाणी द्वारा प्रकट नहीं करना चाहिये, बल्कि मननपूर्वक उसकी रक्षा करते हुये चुपचाप उसे कार्यरूप में परिणत कर देना चाहिये तथा अपने रहस्यों को मित्र अथवा कुमित्र किसी पर भी विश्वास न कर उसे प्रकट नहीं करना चाहिये क्योंकि मित्र के कभी रूष्ट हो जाने पर भेद प्रकट होने का खतरा बना रहता है।–

न विश्वसेत् कुमित्रे च मित्रे चापि न विश्वसेत्। कदाचित् कुपितं मित्रं सर्व गुह्या प्रकाशयेत्।।[19ख]

चाणक्य ने सत्य, धर्म एवं ईश्वरीय शक्ति को सर्वप्रमुख स्थान दिया है। वे मनुष्य को उपदेश देते हैं कि अपने एवं जगत के कल्याण के लिये सदैव सत्य एवं धर्म (कर्तव्य) को विशेष महत्व दे, क्योंकि–

चला लक्ष्मीश्चलाः प्राणाश्चलं जीवित–यौवनम्। चलाचले च संसारे धर्म एको हि निश्चलः।।[20]

इस चराचर जगत में लक्ष्मी, प्राण, यौवन और जीवन सभी कुछ नाषवान है, केवल एक धर्म ही निश्चल है। क्योंकि जीवन भर संग्रह किया हुआ धन भूमि पर, पालतू पशु गोष्ठ में, पत्नी घर के द्वार तक, इश्ट–मित्र श्मशान तक एवं निष्प्राण शरीर चिता पर ही रह जाता है। परलोकमार्ग में केवल मनुष्य का धर्म (शुभ–अशुभ कार्य) ही साथ जाता है। इसीप्रकार मानव को पारिवारिक सांसारिक तृष्णा से दूर रहने को प्रेरित करते हुये चाणक्य कहते है–

एकवृक्षसमारूढ़ा नाना वर्णा विहगंमाः। प्रभाते दिक्षु दशसु का तत्र परिवेदना।।[21]

अतः वे कहते हैं कि मैं धर्म रहित मनुष्य को मरे हुये के समान समझता हूँ। धार्मिक व्यक्ति तो मृत्यु पर्यन्त भी जीवित रहता है एवं उसकी कीर्ति अमर रहती है, ऐसे व्यक्ति को ही सुजीवन समझना चाहिये। अतः मनुष्य को सदैव अपने धर्म में रत रहना चाहिये।

आज के दौर में समाज में दुर्जनों एवं बलशाली का ही सर्वत्र भय व्याप्त रहता है, जिसमें सज्जनों का जीवन दूभर हो जाता है। ऐसे सदाचारी एवं सज्जन मनुष्यों को दुर्जनों के भय का प्रतिकार करने की प्रेरणा प्रदान करते हुये चाणक्य लिखते हैं–

तावद् भयेषु भेतव्यं यावद्भयमनागतम्। आगतं तु भयं दृष्ट्वा प्रहर्तव्यमशङ्गया।।[22]

अर्थात आपत्तियों एवं संकटों से तभी तक भयभीत होना चाहिये, जब तक वे दूर हों,। किन्तु जब वे सिर पर आ जाये तो बिना संकोच उन पर प्रहार कर उन्हें दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये। वे सलाह देते हुये कहते हैं कि मनुष्य को इतना सीधा एवं सरल भी नहीं होना चाहिये कि कोई भी उन्हें सताने लगे। वस्तुतः मनुष्य में कोमलता हो पर साथ ही इतनी तीक्ष्णता एवं शक्ति भी होनी चाहिये कि आवश्यकता पड़ने पर दुष्टों को दण्ड भी दे सके। शत्रु को नष्ट करने के उपाय के सम्बन्ध में उनका कहना है कि जबतक समय अनुकूल न हो तब तक शत्रु को अपने कन्धे पर ढोते हुये उससे मधुर वचन, भाषण, अथवा आदर सत्कार करना चाहिये, और जैसे ही समय अनुकूल आ जाये तब उसे उसीप्रकार नष्ट कर दे, जैसे घड़े को पत्थर पर पटक कर फोड़ा जाता है। यहां तक कि धर्म की रक्षार्थ चाणक्य जैसे को तैसा व्यवहार करने के भी पक्षधर रहे हैं। उनका कहना है कि उपकारी के प्रति प्रत्युपकार और हिंसक के प्रति हिंसा का व्यवहार करने से दोष नहीं लगता। क्योंकि सर्वकल्याण के लिये दुष्ट के साथ दुष्टता का व्यवहार ही उचित है। इसी तर्ज पर अभी हाल ही में पाकिस्तान द्वारा लगातार चलाये जा रहे दुष्टतापूर्ण रवैये (आतंकवादी घटनाओं) के प्रतिकार में भारत द्वारा उसको

उसी की भाषा में उसके अधिकृत क्षेत्र में घुसकर 'सर्जिकल स्ट्राइक' कर आंतकी शिविरों को ध्वस्त करना सर्वथा उचित ही है।

संसार का व्यवहार चलाने के लिये द्वितीय पुरूषार्थ 'अर्थ' के महत्व को स्वीकार करते हुये चाणक्य कहते हैं कि व्यक्ति को विद्या, सेवा, शूरवीरता, कृषि, व्यापार, संगीत, कला आदि जैसे भी धन अवश्य ही कमाना चाहिये, क्यों कि धनी लोगों के द्वार पर गुणीजन भी नौकरों की भाँति पड़े रहते हैं। इस प्रकार इस भौतिक संसार में धन ही मनुश्य का बन्धु है। धनहीन होने पर तो गुणवान होते हुये भी इष्ट–मित्र, बन्धु–बांधव एवं यहां तक कि स्त्री–पुत्रादि तक उसे त्याग देते हैं। किन्तु चाणक्य धर्मपूर्वक कमाये गये धन की ही बात करते हैं। अन्याय अथवा अधर्मपूर्वक भ्रष्टाचार से कमाये धन के बारे में सचेत करते हुये वे कहते हैं– अन्यायोंपार्जितं द्रव्यं दश वर्षाणि तिष्ठति। प्राप्ते चैकादशे वर्षे समूलं तद् विनश्यति।।[23]

अर्थात अन्याय से कमाया धन दस वर्ष तक ठहरता है, ग्यारहवां वर्ष आरम्भ होने पर ब्याज और मूलसहित नष्ट हो जाता है। वे कहते हैं कि अधर्माचरण से प्राप्त धन से व्यक्ति पहले तो तेजी से उन्नति करता है, तत्पश्चात नाना सुखों का भोग करता है, शत्रुओं पर विजय भी पाता है किन्तु अन्त में मूल सहित नष्ट हो जाता है। इसके साथ ही मनुष्य को अपनी आय के अनुसार ही व्यय करने की चेतावनी भी देते हैं। उनके अनुसार सुखी जीवन के लिये मनुष्य को ऋण से बचना चाहिये एवं अपना व्यय सदैव आय से कम ही रखना चाहिये। क्योंकि–

"जमाने की चक्की उसे देगी पीस। जिसकी आमद हो उन्नीस और खर्च हो बीस।।"

आज का मानव अतीत की गलतियों एवं पापों को ढोता रहता है तथा अपने भविष्य के प्रति सदैव ही सशंकित बना रहता है। ऐसे मनुष्यों के सम्बन्ध में चाणक्य लिखते हैं कि व्यक्ति को सदैव अपने कर्मपथ पर आगे बढ़ते रहना चाहिये एवं अतीत अथवा भविष्य के सम्बन्ध में मिथ्या दुःखी न होकर अपने वर्तमान को सुखी बनाने में लगा रहना चाहिये–

गते शोको न कर्तव्यो भविष्यं नैव चिन्तयेत्। वर्तमानेन कालेन प्रवर्तन्ते विचक्षणाः।।[24]

आचार्य चाणक्य ने व्यक्ति से सांसारिक सुख–दुःख की परवाह किये बिना अपने धर्म कर्तव्यों का पालन करने की सलाह दी है। वस्तुतः सुख–दुःख तो सांसारिक जीवन चक्र की भाँति हैं, जिसका एक सिरा ऊपर तो दूसरा नीचे होता है–

कस्यात्यन्तं सुखमुपनतं दुःखमेकान्ततो वा। नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण।।[25]

वर्तमान समय में हमारे जीवन में अनेक समस्याओं का समावेश होता जा रहा है, जिससे मनुष्य अशान्तिपूर्ण जीवन जीने को बाध्य होता जा रहा है। इसका मूल कारण है कि हमने अपनी आचार संहिता को खो दिया है, हम अपने संस्कृति के संवाहक ग्रन्थों के अध्ययन, मनन और चिन्तन से स्वंय को बहुत दूर करते जा रहे हैं, तथा जीवन मूल्यों की उपेक्षा कर संवेदनहीन बन आधुनिकता की इस भौतिकवादी अंधी दौड़ मे पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण कर अपने जीवन को कष्टमय एवं दुःखमय बनाते जा रहे हैं। वस्तुतः चाणक्यनीति का मूल उद्देश्य लोगों को व्यवहारिक जीवन मूल्यों से परिचित कराकर उनमें व्यापत निराशा को दूर कर आचरण की शुद्वता द्वारा अपने नैतिक एवं आध्यात्मिक उन्नति के मार्ग तलाश करना है। आज की हमारी युवा पीढ़ी हिंसा, क्रोध, अहंकार, ईर्ष्या, झूठ आदि के चक्रव्यूह में फंसकर मानवता की पहचान ही खोती जा रही है। उन्हें यह बताना परमावश्यक हो गया है कि आलस्य, प्रमाद, कर्तव्यहीनता, ईर्ष्या, असंयम, हिंसात्मक प्रवृत्ति, न केवल उसके लिये वरन् सम्पूर्ण समाज के लिये विनाशक है। अतः आचार्य चाणक्य द्वारा "चाणक्यनीति" में उल्लिखित 2400 वर्ष पूर्व व्यवहारिक जीवन मूल्यों का ज्ञान न केवल तत्कालीन समय में वरन् वर्तमान में भी उतना ही प्रासंगिक है। उनका उद्देश्य व्यक्ति को संतुलित, संयमित , नैतिक एवं आध्यात्मिक रहकर धर्मपूर्वक अपने कर्तव्यों का निर्वहन करते हुये सुख–दुःख के कारणों की पहचान कर निराशामयी जीवन से बाहर आकर सद्चित्तआनन्दमयी जीवन जीते हुये अपने ह्रदय में मानवता की मूर्ति स्थापित कर सभी को साथ लेकर सभी के कल्याण की

कामना करते हुये "वसुधैव कुटम्बकम" की अवधारणा को चरितार्थ करते हुये जीवन जीना बताना है–

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्। देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते।।26

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःख भागभवेत्।।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सरस्वती, स्वामी जगदीश्वरानन्द, " चाणक्य नीति दर्पणः", दिल्ली, 2002 पृ0–4–6.
2. चाणक्य नीति दर्पणः,– अध्याय प्रथम, श्लोक–प्रथम।
3. पूर्वोद्वत, पृ0–13.
4. चाणक्य नीति दर्पणः, –अध्याय द्वितीय, श्लोक–एकादश
5. वही, अध्याय सप्तम, श्लोक–19
6. वही, अध्याय अष्टम, श्लोक–20
7. वही, अध्याय दशम, श्लोक–तृतीय
8. वही, अध्याय एकादश, श्लोक–दशम्
9. वही, अध्याय सप्तदशो, श्लोक–प्रथम
10. वही, अध्याय त्रयोदशो, श्लोक–16
11. वही, अध्याय षष्ठ, श्लोक–प्रथम
12. वही, अध्याय द्वितीय, श्लोक–12
13. वही, अध्याय तृतीय, श्लोक–18.
14. वही, अध्याय प्रथम, श्लोक–12
15. वही, अध्याय द्वितीय, श्लोक–पंचम
16. वही, अध्याय प्रथम, श्लोक–17
17. वही, अध्याय चतुर्थ, श्लोक–13
18. पूर्वोद्वत, पृ0–54.
19. वही, अध्याय द्वितीय, श्लोक–सप्तम 19. ख.– वही, अध्याय द्वितीय, श्लोक–षष्ठ
20. वही, अध्याय पंचम, श्लोक–20
21. वही, अध्याय दशम, श्लोक–15
22. वही, अध्याय पंचम, श्लोक–तृतीय
23. वही, अध्याय पन्चदशो, श्लोक–षष्ठ
24. वही, अध्याय त्रयोदश, श्लोक–द्वितीय
25. पूर्वोद्वत, पृ0–34.
26. ऋग्वेद 10/191/2